महाराज कुमार कमल सिंह

बनाम

आयकर आयुक्त, बिहार एवं उड़ीसा

(वेंकटरामा अय्यर, गजेंद्रगडकर एवं ए. के. सरकार, न्यायमूर्तिगण)

आयकर — पुनर्निर्धारण — अनिर्धारित आय — परवर्ती रूप से त्रुटिपूर्ण पाए गए विधि के कथन पर आधारित निर्धारण आदेश — क्या निर्धारण पुनः किया जा सकता है — "सूचना", "अनिर्धारित आय", अर्थ — भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 (1922 का XI), अधिनियम 48/1948 द्वारा यथासंशोधित, धारा 34(1)(ख)।

अपीलार्थी के आयकर निर्धारण के संबंध में, पटना उच्च न्यायालय के *कामाक्ष्या नारायण सिंह बनाम आयकर आयुक्त*, [1946] 14 आई.टी.आर. 673 में दिए गए निर्णय के दृष्टिगत कि यह राशि कर योग्य नहीं है, आयकर अधिकारी ने उसके द्वारा प्राप्त बकाया किराए के ब्याज की राशि को बाहर रखा, यद्यपि आयकर विभाग द्वारा उक्त निर्णय के विरुद्ध प्रिवी काउंसिल में अपील उस समय तक लंबित थी। तत्पश्चात दिनांक 6 जुलाई, 1948 को प्रिवी काउंसिल ने अपील स्वीकृत की और अभिनिर्धारित किया कि कृषि भूमि के संबंध में देय बकाया किराए का ब्याज कृषि आय नहीं है क्योंकि यह न तो किराया है और न ही भूमि से प्राप्त राजस्व। इस निर्णय के परिणामस्वरूप आयकर अधिकारी ने यथासंशोधित भारतीय आयकर अधिनियम, 1922 की धारा 34 के अंतर्गत कार्यवाही की और उपरोक्त राशि जोड़कर निर्धारण आदेश संशोधित किया, इस आधार पर कि प्रिवी काउंसिल का परवर्ती निर्णय धारा 34(1)(ख) के अर्थ में सूचना है और आयकर अधिकारी को यह विश्वास करने का कारण था कि निर्धारिती की आय का एक भाग निर्धारण से बच गया था। अपीलार्थी की ओर से यह तर्क दिया गया कि धारा 34(1)(ख) इस मामले में लागू नहीं है क्योंकि (1) धारा में उल्लिखित सूचना का तात्पर्य तथ्यों के विषय में सूचना से है और इसमें विधि के किसी प्रश्न

पर प्रिवी काउंसिल का निर्णय सम्मिलित नहीं हो सकता, और (2) जहाँ आय निर्धारण हेतु विधिवत विवरणी प्रस्तुत की गई हो और आयकर अधिकारी द्वारा निर्धारण आदेश पारित किया गया हो, वहाँ यह नहीं कहा जा सकता कि धारा 34(1)(ख) के अंतर्गत कोई आय निर्धारण से बची है।

अभिनिर्धारित, (1) कि अधिनियम की धारा 34(1)(ख) में "सूचना" शब्द में विधि की सही एवं यथार्थ स्थिति के विषय में सूचना सम्मिलित है और इस प्रकार सुसंगत न्यायिक निर्णयों के विषय में सूचना को आच्छादित करेगा; और,

(2) कि धारा 34(1)(ख) में "निर्धारण से बच गई है" अभिव्यक्ति को प्रतिबंधित अर्थ नहीं दिया जा सकता जो इसे केवल उन मामलों तक सीमित करे जहाँ निर्धारिती ने कोई विवरणी प्रस्तुत नहीं की है। यह धारा न केवल वहाँ लागू होती है जहाँ असावधानी या चूक के कारण या विवरणी प्रस्तुत न होने के कारण आय का निर्धारण नहीं हुआ, बल्कि वहाँ भी लागू होती है जहाँ विवरणी प्रस्तुत की गई हो, किंतु आयकर अधिकारी भूलवश निर्धारणीय आय के एक भाग पर कर लगाने में विफल रहा हो।

राजेंद्र नाथ मुखर्जी बनाम आयकर आयुक्त, (1933) एल.आर. 61 आई.ए. 10 एवं *मेसर्स चट्टराम होरीराम लिमिटेड बनाम आयकर आयुक्त, बिहार एवं उड़ीसा,* [1955] 2 एस.सी.आर. 290, विभेदित।

राजा बिनोय कुमार सहस रॉय बनाम आयकर आयुक्त, पश्चिम बंगाल, [1953] 24 आई.टी.आर. 70, मदन लाल बनाम आयकर आयुक्त, पंजाब, [1944] 12 आई.टी.आर. 8 एवं *आयकर आयुक्त बनाम पार्लाकिमेडी के राजा,* (1926) आई.एल.आर. 49 मद्रास 22, अनुमोदित।

महाराजा बिक्रम किशोर त्रिपुरा बनाम असम प्रांत, [1949] 17 आई.टी.आर. 220, अननुमोदित।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: दीवानी अपील संख्या 297/1955।

पटना उच्च न्यायालय द्वारा विविध न्यायिक वाद सं. 327/1951 में दिनांक 7 अप्रैल, 1954 के निर्णय एवं डिक्री से अपील।

अपीलार्थी की ओर से: *ए.वी. विश्वनाथ शास्त्री एवं बी.के. सिन्हा।*

उत्तरदाता की ओर से: *के.एन. राजगोपाल शास्त्री, आर.एच. ढेबर एवं डी. गुप्ता।*

1 अक्टूबर, 1958 1. न्यायालय का निर्णय

न्यायमूर्ति गजेंद्रगडकर द्वारा प्रदत्त किया गया। यह पटना उच्च न्यायालय द्वारा आयकर अधिनियम (जिसे इसके आगे 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 66क(2) के अंतर्गत जारी प्रमाणपत्र सहित अपील है और यह अधिनियम की धारा 34(1)(ख) की व्याख्या का एक संक्षिप्त प्रश्न उठाती है। यह प्रश्न इस प्रकार उत्पन्न होता है। आयकर अधिकारी, विशेष अंचल, पटना द्वारा अपीलार्थी के पिता महाराजा बहादुर रामा राउ विजय प्रसाद सिंह के विरुद्ध वर्ष 1945-46 के लिए आयकर अधिरोपित करने हेतु कार्यवाही की गई। उक्त आदेश द्वारा आयकर हेतु निर्धारित कुल आय 1,60,602 रुपये थी। इस राशि में वह रकम 93,604 रुपये सम्मिलित थी जो निर्धारिती को संग्रहण प्रभारों की कटौती के पश्चात उसकी बकाया किराए की ब्याज के रूप में प्राप्त हुई थी। निर्धारिती की ओर से आयकर अधिकारी के समक्ष यह तर्क दिया गया कि पटना उच्च न्यायालय के *कामाक्ष्या नारायण सिंह बनाम आयकर आयुक्त* ([1]) के निर्णय के दृष्टिगत यह राशि कर योग्य नहीं है। तथापि आयकर अधिकारी ने माना कि चूँकि विभाग ने उक्त निर्णय के विरुद्ध प्रिवी काउंसिल में अपील की अनुमति प्राप्त कर ली है, इसलिए मामला *विचाराधीन* है और अतः वह निर्धारिती के तर्क को स्वीकार करने में उचित नहीं होगा। परिणामतः उसने उक्त राशि को निर्धारण प्रयोजनों हेतु कुल आय में सम्मिलित किया, किंतु यह आदेश दिया कि उक्त राशि पर कर की वसूली प्रिवी काउंसिल के

1[1946] 14 आयकर रिपोर्ट 673।

निर्णय या 31 मार्च, 1947, जो भी पहले हो, तक स्थगित रखी जाए। यह आदेश अधिनियम की धारा 23(3) के अंतर्गत दिनांक 31 दिसंबर, 1945 को पारित किया गया।

इस आदेश के विरुद्ध निर्धारिती ने पटना के आयकर अपीलीय सहायक आयुक्त के समक्ष अपील दायर की। दिनांक 8 मई, 1946 को अपीलीय प्राधिकारी ने अभिनिर्धारित किया कि आयकर अधिकारी *कामाक्ष्या नारायण सिंह (उपर्युक्त)* ([1]) के मामले में निर्णय का अनुपालन करने के लिए बाध्य था और इसलिए उसने 93,604 रुपये की राशि के संबंध में अपीलाधीन आदेश अपास्त किया और आयकर अधिकारी को नया निर्धारण करने का निर्देश दिया। उसने यह भी टिप्पणी की कि यह स्पष्ट नहीं था कि उक्त राशि का कौन सा भाग कृषि किराए की बकाया ब्याज से और कौन सा भाग गैर-कृषि किराए की बकाया ब्याज से संबंधित है। आयकर अधिकारी को तदनुसार परवर्ती राशि निर्धारित करने और उस पर कर अधिरोपित करने का निर्देश दिया गया।

इस अपीलीय आदेश के अनुपालन में आयकर अधिकारी ने दिनांक 20 अगस्त, 1946 को अधिनियम की धारा 23(3) एवं 31 के अंतर्गत नया निर्धारण किया। इस आदेश द्वारा कर योग्य आय की कुल राशि 93,604 रुपये की संपूर्ण राशि उसमें से घटाकर निर्धारित की गई। अपीलीय आदेश के अनुपालन में कुछ अन्य मामूली कटौतियाँ भी की गईं। विभाग ने न तो अपीलीय आदेश को और न ही उक्त अपीलीय आदेश के अनुपालन में आयकर अधिकारी द्वारा पारित परवर्ती आदेश को चुनौती दी।

तत्पश्चात, दिनांक 6 जुलाई, 1948 को *कामाक्ष्या नारायण सिंह* ([1]) के मामले में पटना उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध विभाग द्वारा प्रिवी काउंसिल में दायर अपील स्वीकृत की गई और अभिनिर्धारित किया गया कि कृषि भूमि के संबंध में देय बकाया किराए का ब्याज कृषि आय नहीं है क्योंकि यह न तो किराया है और न ही भूमि से प्राप्त राजस्व।

इस निर्णय के परिणामस्वरूप आयकर अधिकारी ने दिनांक 25 सितंबर, 1948 को अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत निर्धारिती को नोटिस जारी किया। इस नोटिस में निर्धारिती से नई विवरणी दाखिल करने की अपेक्षा की गई क्योंकि आयकर अधिकारी को यह विश्वास करने का कारण था कि 31 मार्च, 1946 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए आयकर हेतु निर्धारणीय निर्धारिती की आय का एक भाग निर्धारण से बच गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि यह नोटिस दोषपूर्ण पाया गया, और इसलिए धारा 34 के यथासंशोधित प्रावधानों के अंतर्गत अधिकारी द्वारा दिनांक 18 मार्च, 1949 को निर्धारिती को नया नोटिस जारी किया गया। अधिकारी द्वारा धारा 34 के अंतर्गत इस प्रकार की गई कार्यवाही अंततः अधिनियम की धारा 23(3) एवं 34 के अंतर्गत पारित संशोधित निर्धारण आदेश में परिणत हुई और 93,604 रुपये की राशि बकाया किराए के ब्याज के रूप में निर्धारण राशि में जोड़ी गई। यह संशोधित निर्धारण आदेश दिनांक 30 अप्रैल, 1949 को पारित किया गया।

निर्धारिती ने इस आदेश के विरुद्ध अपील की किंतु अपीलीय प्राधिकारी ने दिनांक 26 जुलाई, 1949 को निर्धारिती की अपील खारिज कर उक्त आदेश की पुष्टि की। उसने अभिनिर्धारित किया कि *कामाक्ष्या नारायण सिंह (उपर्युक्त)* (1) के मामले में प्रिवी काउंसिल का परवर्ती निर्णय धारा 34(1) के खंड (क) एवं (ख) के अर्थ में सूचना है और आयकर अधिकारी को यह विश्वास करने का कारण था कि निर्धारिती की आय का एक भाग निर्धारण से बच गया था। निर्धारिती ने तब आयकर अपीलीय अधिकरण का रूख किया; किंतु दिनांक 21 अगस्त, 1950 को अधिकरण ने अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश की पुष्टि कर निर्धारिती की अपील खारिज की। यह अभिनिर्धारित किया गया कि 1948 में यथासंशोधित धारा 34 के प्रावधान मामले पर लागू होते हैं और प्रिवी काउंसिल का निर्णय इसे धारा 34 की उप-धारा (1)(ख) के अधिकार-क्षेत्र में लाता है।

इसी मध्य निर्धारिती की मृत्यु हो गई और अपीलार्थी अपने मृत पिता की संपदा का उत्तराधिकारी हुआ। उसने तब अधिनियम की धारा 66(1) के अंतर्गत आवेदन दाखिल कर अधिकरण से मामले में उठाए गए विधि के प्रश्न को अपनी राय हेतु पटना उच्च न्यायालय को निर्देशित करने की अपेक्षा की। अधिकरण ने दिनांक 27 फरवरी, 1951 को इस आवेदन को अस्वीकार कर दिया। तत्पश्चात अपीलार्थी ने अधिनियम की धारा 66(2) के अंतर्गत पटना उच्च न्यायालय का रूख किया; उसका आवेदन स्वीकृत हुआ और उच्च न्यायालय ने दिनांक 15 दिसंबर, 1951 को अधिकरण को वाद कथन प्रस्तुत करने और विधि के प्रश्न को अपनी राय हेतु निर्देशित करने का आदेश दिया। उच्च न्यायालय की अपेक्षा के अनुपालन में अधिकरण ने दिनांक 23 जुलाई, 1952 को अपने आदेश द्वारा वाद कथन प्रस्तुत किया और अपीलार्थी द्वारा उठाए गए विधि के प्रश्न को उच्च न्यायालय की राय हेतु निर्देशित किया। इस प्रकार उठाया गया प्रश्न है: "क्या मामले की परिस्थितियों में बकाया किराए की ब्याज का अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत निर्धारण आदेश विधिसम्मत है?" दिनांक 7 अप्रैल, 1954 को पटना उच्च न्यायालय के न्यायमूर्तिगण वी. रामास्वामी एवं सी.पी. सिन्हा द्वारा इस निर्देश की सुनवाई की गई और विधि के प्रश्न का उत्तर उनके द्वारा विभाग के पक्ष में दिया गया। अपीलार्थी ने तब दिनांक 13 सितंबर, 1954 को पटना उच्च न्यायालय से प्रमाणपत्र के लिए आवेदन किया और उसे प्राप्त किया। उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 66क, उप-खंड (2) के अंतर्गत प्रमाणित किया है कि मामला मुलभूत प्रकार के विधि के प्रश्न को उठाता है और अन्यथा इस न्यायालय में अपील के लिए उपयुक्त मामला है। इसी प्रकार वर्तमान अपील हमारे समक्ष आई है; और यह हमारे निर्णय हेतु अधिनियम की धारा 34(1)(ख) की सही व्याख्या के विषय में प्रश्न उठाती है।

अधिनियम की धारा 34 को 1939 एवं 1948 में संशोधित किया गया है। अपीलार्थी की ओर से श्री विश्वनाथ शास्त्री द्वारा यह स्वीकृत किया गया है कि वर्तमान मामला 1948 में यथासंशोधित धारा द्वारा शासित है। यह संशोधित धारा 34, उप-धारा (1), दो खंडों में आय

निर्धारण से बचने के मामलों से संबंधित है। खंड (क) उन मामलों को आच्छादित करता है जहाँ आय का निर्धारण धारा 22 के अंतर्गत निर्धारिती की अपनी आय की विवरणी प्रस्तुत करने में लोप या विफलता के कारण निर्धारण से बची हो। हमें इस खंड से कोई प्रयोजन नहीं है। धारा 34(1) का खंड (ख) अन्य बातों के साथ यह प्रावधान करता है कि "इस बात के होते हुए भी कि निर्धारिती की ओर से खंड (क) में उल्लिखित कोई लोप या विफलता नहीं हुई है, यदि आयकर अधिकारी के पास उपलब्ध सूचना के परिणामस्वरूप यह विश्वास करने का कारण हो कि किसी वर्ष के लिए आयकर हेतु प्रभार्य आय, लाभ या अभिलाभ निर्धारण से बच गए हैं, या न्यून निर्धारित हुए हैं, या बहुत कम दर पर निर्धारित हुए हैं, या अधिनियम के अंतर्गत अत्यधिक राहत का विषय बनाए गए हैं, या कि अत्यधिक हानि या मूल्यह्रास भत्ते की गणना की गई है, तो वह उस वर्ष की समाप्ति के चार वर्ष के भीतर किसी भी समय निर्धारिती पर ऐसी सूचना जारी कर सकता है जिसमें वे सभी या कोई अपेक्षाएँ सम्मिलित हों जो धारा 22 की उप-धारा (2) के अंतर्गत नोटिस में सम्मिलित की जा सकती हैं, और ऐसी आय, लाभ या अभिलाभ का निर्धारण या पुनर्निर्धारण करने या हानि या मूल्यह्रास भत्ते की पुनर्गणना करने की कार्यवाही कर सकता है, और इस अधिनियम के प्रावधान, जहाँ तक हो सके, इस प्रकार लागू होंगे जैसे कि नोटिस उक्त उप-धारा के अंतर्गत जारी नोटिस हो"। यह स्पष्ट है कि आयकर अधिकारी के धारा 34(1)(ख) के अंतर्गत कार्य करने से पूर्व दो शर्तें पूरी होनी चाहिए। उसके पास सूचना होनी चाहिए, जिसका संदर्भ में अर्थ है कि संबंधित सूचना प्रश्नगत निर्धारण आदेश किए जाने के पश्चात उसके पास आई होनी चाहिए और इस सूचना से यह विश्वास उत्पन्न होना चाहिए कि किसी वर्ष के लिए आयकर हेतु प्रभार्य आय निर्धारण से बची है, या वह न्यून निर्धारित हुई है या बहुत कम दर पर निर्धारित हुई है या अधिनियम के अंतर्गत अत्यधिक राहत का विषय बनाई गई है। इस उप-धारा के अंतर्गत वर्तमान अपील में श्री शास्त्री द्वारा दो प्रश्न उठाए गए हैं। उनका तर्क है कि संबंधित सूचना का अर्थ तथ्यों के विषय में सूचना है और इसमें विधि के किसी प्रश्न पर

प्रिवी काउंसिल का निर्णय सम्मिलित नहीं हो सकता; और उनका तर्क है कि जहाँ आय निर्धारण हेतु विधिवत विवरणी प्रस्तुत की गई हो और आयकर अधिकारी द्वारा निर्धारण आदेश पारित किया गया हो, वहाँ यह नहीं कहा जा सकता कि धारा 34(1)(ख) के अंतर्गत कोई आय निर्धारण से बची है। इस प्रकार अपीलार्थी का मामला यह है कि धारा 34(1)(ख) द्वारा अपेक्षित दोनों शर्तें पूरी नहीं हुई हैं और इसलिए अपीलार्थी के विरुद्ध पारित संशोधित निर्धारण आदेश अवैध है।

यह अविवादित है कि अपने कड़े शाब्दिक अर्थ के अनुसार "सूचना" शब्द में विधि की स्थिति या विधि के किसी प्रश्न पर निर्णय के विषय में ज्ञान भी सम्मिलित हो सकता है। तथापि तर्क यह है कि संदर्भ की अपेक्षा है कि "सूचना" शब्द को संकीर्ण व्याख्या दी जाए जो इसे विधि की सही स्थिति के विषय में सूचना से भिन्न तथ्यों या तथ्यात्मक सामग्री तक सीमित करे। इस तर्क के समर्थन में श्री शास्त्री ने धारा 19क एवं 20क के हाशिया नोट्स तथा धारा 22(3) एवं धारा 28 के प्रावधानों का संदर्भ दिया और तर्क दिया कि इन प्रावधानों द्वारा परिकल्पित सूचना तथ्यों या विशिष्टताओं के विषय में सूचना है और विधि की स्थिति या विधि के किसी प्रश्न से इसका कोई संबंध नहीं है; और इसलिए धारा 34(1)(ख) में उक्त शब्द की व्याख्या केवल तथ्यात्मक सूचना के अर्थ में की जानी चाहिए। हम इस तर्क से संतुष्ट नहीं हैं। यदि अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान में प्रयुक्त "सूचना" शब्द तथ्यों या विशिष्टताओं के विषय में सूचना को अभिव्यक्त करता है, तो यह आवश्यक रूप से धारा 34(1)(ख) में उक्त शब्द का अर्थ निर्धारित नहीं करेगा। उक्त शब्द का अभिव्यंजन स्वाभाविक रूप से उस विशेष प्रावधान के संदर्भ पर निर्भर करेगा जिसमें इसका प्रयोग किया गया है। तब यह तर्क दिया जाता है कि धाराएँ 33ख एवं 35 क्रमशः विनिर्दिष्ट प्राधिकारियों को आयकर अधिकारी के आदेशों को संशोधित करने और गलतियों को सुधारने की पर्याप्त शक्तियाँ प्रदान करती हैं और इसलिए धारा 34(1)(ख) में "सूचना" शब्द की कड़ी व्याख्या करना और इसे तथ्यों या विशिष्टताओं के विषय में सूचना तक सीमित करना उचित होगा। यह तर्क भी

वैध नहीं है। यदि "सूचना" शब्द अपने सरल व्याकरणिक अर्थ में तथ्यों के विषय में सूचना के साथ-साथ विधि की स्थिति के विषय में सूचना को भी सम्मिलित करता है, तो यह अनुचित होगा कि बाह्य विचार के आधार पर इसे तथ्यों के विषय में सूचना तक सीमित कर दिया जाए कि विधि की गलती के आधार पर संशोधित या सुधारे जाने की आवश्यकता वाले निर्धारण के कुछ मामले संभवतः धाराओं 33 ख एवं 35 द्वारा आच्छादित हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, इन दो धाराओं का प्रयोग उनके द्वारा विहित सीमाओं के अधीन है; और इसलिए यह तथ्य कि उक्त धाराएँ संशोधन या सुधार की शक्तियाँ प्रदान करती हैं, धारा 34(1)(ख) की व्याख्या में सुसंगत एवं महत्वपूर्ण नहीं होगा। धारा 34 का स्पष्टीकरण भी अपीलार्थी की सहायता नहीं करता। यह सत्य है कि स्पष्टीकरण के अंतर्गत आयकर अधिकारी के समक्ष लेखा-पुस्तकों या अन्य साक्ष्य का उत्पादन जिनसे उचित परिश्रम से भौतिक तथ्य आयकर अधिकारी द्वारा खोजे जा सकते थे, उक्त धारा के अर्थ में प्रकटीकरण की राशि आवश्यक नहीं होगी; किंतु हम नहीं देखते कि इसका धारा 34(1) के खंड (ख) की व्याख्या पर कोई प्रभाव कैसे हो सकता है। दूसरी ओर, धारा 34(1)(ख) में विशेष रूप से उल्लिखित मामलों में से एक आवश्यक रूप से यह प्रकल्पित करता है कि "सूचना" शब्द का विधि के विषय में सूचना से संबंध होना चाहिए। जहाँ, अपने पास उपलब्ध सूचना के परिणामस्वरूप, आयकर अधिकारी को यह विश्वास करने का कारण हो कि किसी आय का निर्धारण बहुत कम दर पर किया गया है, वह निर्धारण को संशोधित करने हेतु सशक्त है; और इसमें कोई संदेह नहीं कि आयकर अधिकारी का यह विश्वास कि किसी दी गई आय का निर्धारण बहुत कम दर पर किया गया है, कई मामलों में संबंधित दरों के विषय में सच्ची विधिक स्थिति के विषय में सूचना के कारण हो सकता है। यदि इस वर्ग के मामलों के संदर्भ में "सूचना" शब्द में आवश्यक रूप से विधि के विषय में सूचना सम्मिलित होनी चाहिए, तो यह स्वीकार करना असंभव है कि उसी प्रावधान के अंतर्गत आने वाले अन्य मामलों के संबंध में उसी शब्द का संकीर्ण एवं अधिक सीमित अर्थ होना चाहिए। हम तदनुसार यह अभिनिर्धारित करेंगे कि धारा

34(1)(ख) में "सूचना" शब्द में विधि की सही एवं यथार्थ स्थिति के विषय में सूचना सम्मिलित है और इस प्रकार सुसंगत न्यायिक निर्णयों के विषय में सूचना को आच्छादित करेगा। यदि यही सही स्थिति है, तो यह तर्क कि आयकर अधिकारी प्रश्नगत प्रिवी काउंसिल के निर्णय को धारा 34(1)(ख) के अंतर्गत सूचना के रूप में मानने में उचित नहीं था, स्वीकार नहीं किया जा सकता।

अगला प्रश्न जिस पर विचार किया जाना शेष है, धारा 34(1)(ख) द्वारा विहित अन्य शर्त के विषय में है। आय को निर्धारण से कब बचा हुआ कहा जा सकता है? श्री शास्त्री ने तर्क दिया कि "निर्धारण" शब्द का अर्थ केवल निर्धारण का आदेश नहीं है, बल्कि इसमें कर अधिरोपित करने के प्रयोजन हेतु और कराधान की प्रक्रिया के दौरान उठाए गए सभी कदम सम्मिलित हैं। यह निःसंदेह सत्य है; किंतु "निर्धारण" शब्द का व्यापक अभिव्यंजन वास्तव में अपीलार्थी की सहायता नहीं करता; यह केवल यह दर्शाता है कि निर्धारण के आदेश के साथ, जो कराधान की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण कार्य है, कराधान के क्रम में अपनाए गए अन्य कार्य एवं कदम भी शब्द में सम्मिलित हैं; किंतु "कराधान की प्रक्रिया में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य" ही वह है जिससे हम वर्तमान अपील में संबंधित हैं। तब यह तर्क दिया जाता है कि ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार "बचना" शब्द का अर्थ है "दृष्टि, खोज आदि से बचना; किसी व्यक्ति की दृष्टि से बचना"; और तर्क यह है कि केवल वहाँ जहाँ आय निर्धारण हेतु विवरणी नहीं दी गई हो, यह उचित रूप से कहा जा सकता है कि आय निर्धारण से बच गई है। शब्दकोश का अर्थ श्री शास्त्री के तर्क का समर्थन नहीं करता। उसी शब्दकोश के अनुसार "बचना" शब्द का अर्थ यह भी है "पीछा या पीछा करने वाले से पूर्णतः दूर हो जाना; (किसी कष्टप्रद या अनिष्टकर वस्तु) से बचने में सफल होना"; ताकि केवल शब्दकोश के अर्थ के आधार पर निर्णय करने पर "बचना" शब्द के अर्थ को केवल उन मामलों तक सीमित करना कठिन होगा जहाँ निर्धारिती ने कोई विवरणी नहीं दी हो। यहाँ तक कि यदि निर्धारिती ने अपनी आय की विवरणी प्रस्तुत की हो, ऐसे मामले हो सकते हैं

जहाँ संपूर्ण आय का निर्धारण नहीं हुआ हो और आय का वह भाग जिसका निर्धारण नहीं हुआ हो, निर्धारण से बचा हुआ भली-भाँति माना जा सकता है। वर्तमान मामले में, निर्धारिती की कृषि भूमि से उसे प्राप्त बकाया किराए की ब्याज आयकर अधिकारी के ध्यान में लाई गई; इस प्रश्न पर विचार किया गया कि क्या उक्त राशि विधितः निर्धारित की जा सकती है और अंततः यह अभिनिर्धारित किया गया कि पटना उच्च न्यायालय का संबंधित निर्णय जो विभाग पर बाध्यकारी था, निर्धारिती के दावे को उचित ठहराता है कि उक्त आय कर हेतु निर्धारित किए जाने के योग्य नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं कि निर्धारिती की आय का एक भाग निर्धारित नहीं हुआ था और उस अर्थ में वह स्पष्ट रूप से निर्धारण से बच गया था। क्या यह कहा जा सकता है कि, क्योंकि पटना उच्च न्यायालय के बाध्यकारी निर्णय के आलोक में मामले के गुण-दोष पर विचार एवं निर्णय किया गया था, इसलिए जब उक्त पटना उच्च न्यायालय के निर्णय को प्रिवी काउंसिल द्वारा परवर्ती रूप से उलट दिया गया हो तो कोई आय निर्धारण से नहीं बची है? हम इस मत को ठहराने में कोई औचित्य नहीं देखते कि आय के निर्धारण से बचने के मामले सदैव ऐसे मामले होने चाहिए जहाँ असावधानी या चूक के कारण या विवरणी प्रस्तुत न होने के कारण आय का निर्धारण न हुआ हो। हमारी राय में, यहाँ तक कि जहाँ विवरणी प्रस्तुत की गई हो, यदि आयकर अधिकारी भूलवश निर्धारणीय आय के एक भाग पर कर लगाने में विफल रहता है, यह एक ऐसा मामला है जहाँ आय का उक्त भाग निर्धारण से बच गया है। अतः धारा 34(1)(ख) में "बचना" शब्द के अर्थ पर अत्यंत संकीर्ण एवं कृत्रिम सीमा लगाने का अपीलार्थी का प्रयास सफल नहीं हो सकता।

तथापि श्री शास्त्री ने तर्क दिया कि "निर्धारण से बची है" अभिव्यक्ति की जिस संकीर्ण व्याख्या के लिए वे तर्क करते हैं, उसे प्रिवी काउंसिल ने *राजेंद्र नाथ मुखर्जी बनाम आयकर आयुक्त* ([2]) में अनुमोदित किया है। वे विशेषतः इस मामले के निर्णय में की गई इस टिप्पणी

2(1933) 61 आई.ए. 10, 16।

पर निर्भर करते हैं कि "यह तथ्य कि धारा 34 नोटिस जारी करने की अपेक्षा करती है जिसमें निर्धारण से बची आय की विवरणी माँगी जाए, यह दृढ़तापूर्वक सुझाता है कि जो आय पहले से ही निर्धारण हेतु विधिवत विवरणी में शामिल की जा चुकी हो उसे वैधानिक अर्थ में 'बचा' हुआ नहीं कहा जा सकता"। इस टिप्पणी के प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए मामले में सारभूत तथ्यों और प्रिवी काउंसिल के निर्णय हेतु उठाए गए विशिष्ट बिंदुओं की परीक्षा आवश्यक होगी। ऐसा प्रतीत होता है कि 1930 में आयकर अधिकारी ने बर्न एंड कंपनी, जो एक अपंजीकृत फर्म थी, के विरुद्ध निर्धारण आदेश पारित कर उन्हें अधिनियम के अंतर्गत वर्ष 1927-28 के लिए आयकर एवं अधिकर हेतु निर्धारित किया था। बोर्ड के समक्ष अपीलार्थी, जो बर्न एंड कंपनी के व्यक्तिगत भागीदार थे, ने तर्क दिया कि निर्धारण वर्ष के संबंध में जिस वर्ष के लिए निर्धारण किया गया, 31 मार्च, 1928 को उसकी समाप्ति के पश्चात फर्म पर आक्षेपित निर्धारण करना अधिकारी के लिए सक्षम नहीं था। आयकर आयुक्त ने निर्धारण में हुई देरी की व्याख्या करने वाले अन्य सुसंगत तथ्यों का संदर्भ देकर इस अभिवाक् का सामना किया। 1926-27 के अंत में, मार्टिन एंड कंपनी की पंजीकृत फर्म के भागीदारों ने बर्न एंड कंपनी का व्यापार एवं संपत्तियाँ खरीदी थीं। यह लेन-देन मार्टिन एंड कंपनी की फर्म की ओर से नहीं बल्कि फर्म के भागीदारों द्वारा व्यक्तिगत रूप से किया गया था। अप्रैल 1927 में, जिला-1 के आयकर अधिकारी ने बर्न एंड कंपनी को धारा 22(2) के अंतर्गत नोटिस जारी कर 31 मार्च, 1927 को समाप्त होने वाले वर्ष के लिए उनकी कुल आय की विवरणी वर्ष 1927-28 के निर्धारण की दृष्टि से माँगी। जिला-2 के आयकर अधिकारी द्वारा भी इसी प्रकार का नोटिस जारी किया गया। जब ये नोटिस जारी किए गए तो दोनों अधिकारियों को ज्ञात नहीं था कि बर्न एंड कंपनी का व्यापार मार्टिन एंड कंपनी के भागीदारों द्वारा खरीद लिया गया था। तत्पश्चात यह लेन-देन आयकर प्राधिकारियों के ज्ञान में आया जिस पर जिला-2 से संबंधित अधिकारी द्वारा बर्न एंड कंपनी की फाइल स्थानांतरित की गई, और फरवरी 1928 में, इस आधार पर कि बर्न एंड कंपनी का व्यापार मार्टिन एंड कंपनी की

एक शाखा बन गया था, मार्टिन एंड कंपनी एवं बर्न एंड कंपनी द्वारा विवरणी में दी गई संयुक्त आय के संबंध में मार्टिन एंड कंपनी के विरुद्ध निर्धारण आदेश पारित किया गया। मार्टिन एंड कंपनी ने इस निर्धारण के विरुद्ध अपील की और उनकी अपील मई 1930 में उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकृत की गई। यह अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम के प्रयोजन हेतु पंजीकृत फर्म की आय को अपंजीकृत फर्म की आय के साथ संयुक्त नहीं किया जा सकता बल्कि प्रत्येक की आय का पृथक् रूप से निर्धारण किया जाना चाहिए चाहे दोनों व्यवसायों के लाभ में हितबद्ध व्यक्ति एक ही हों। इस निर्णय के परिणामस्वरूप, मार्टिन एंड कंपनी पर किया गया निर्धारण उसमें से बर्न एंड कंपनी द्वारा विवरणी में दी गई आय को निकालकर संशोधित किया गया, और नवंबर 1930 में, बर्न एंड कंपनी पर जनवरी 1928 में उनके द्वारा विवरणी में दी गई आय पर निर्धारण किया गया। प्रिवी काउंसिल के समक्ष अपील का विषय-वस्तु यही निर्धारण था। इस प्रकार यह देखा जाता है कि अपीलार्थियों द्वारा प्रिवी काउंसिल के समक्ष उठाया गया मुख्य प्रश्न था: क्या नवंबर 1930 में वर्ष 1927-28 के लिए अपीलार्थियों पर धारा 23(1) के अंतर्गत किया गया निर्धारण वैध निर्धारण था? तर्क यह था कि आयकर अधिनियम की सही व्याख्या पर, आयकर अधिकारी के लिए निर्धारण वर्ष के भीतर निर्धारण कार्यवाही पूर्ण करना अनिवार्य था, और ऐसे निर्धारण के इस प्रकार पूर्ण न होने की स्थिति में आयकर प्राधिकारियों के लिए उपलब्ध एकमात्र उपाय धारा 34 के अंतर्गत कार्यवाही करना था। इस तर्क को प्रिवी काउंसिल ने अस्वीकार किया। लॉर्डशिप्स ने अभिनिर्धारित किया कि न तो धारा 23 और न ही अधिनियम के किसी अन्य स्पष्ट प्रावधान ने उस समय को सीमित किया जिसके भीतर निर्धारण किया जाना चाहिए। तत्पश्चात उन्होंने अपीलार्थियों के अन्य तर्क की परीक्षा की कि धारा 34 में कर वर्ष की समाप्ति के पश्चात निर्धारण करने के विरुद्ध प्रतिषेध निहित है। इस तर्क से निपटते हुए धारा 34 की व्याख्या की गई और यह टिप्पणी की गई कि तर्क "निर्धारण" शब्द पर बहुत संकीर्ण अर्थ और "बचना" शब्द पर बहुत व्यापक अर्थ लगाना चाहता है। इसी संबंध में लॉर्डशिप्स ने

लच्छीराम बसंतलाल ([3]*) के संदर्भ में* रैंकिन मुख्य न्यायाधीश की इस टिप्पणी को अनुमोदित किया कि "..... आय निर्धारण से नहीं बची है यदि उस समय निर्धारिती की आय के निर्धारण की कार्यवाहियाँ लंबित हों जो उसके अंतिम निर्धारण में अभी समाप्त नहीं हुई हों"। दूसरे शब्दों में, प्रिवी काउंसिल का निष्कर्ष था कि जब तक किसी निर्धारिती के विरुद्ध निर्धारण कार्यवाहियाँ लंबित हों और उन पर कोई अंतिम आदेश पारित नहीं हुआ हो, यह सुझाव देना समयपूर्व होगा कि निर्धारिती की कोई आय निर्धारण से बच गई है। केवल आयकर अधिकारी द्वारा कर अधिरोपित करने का अंतिम आदेश पारित होने के पश्चात ही यह कहना संभव होगा कि निर्धारिती की आय का कोई भाग निर्धारण से बच गया है। परिणामतः लॉर्डशिप्स ने अभिनिर्धारित किया कि "चूँकि धारा 22(2) के अंतर्गत अपीलार्थियों के विरुद्ध जारी नोटिस के अनुसरण में कार्यवाहियाँ लंबित थीं और अपीलार्थियों के विरुद्ध उक्त कार्यवाहियों में कोई आदेश नहीं पारित किया गया था, इसलिए उनके इस तर्क को स्वीकार करना संभव नहीं होगा कि आयकर अधिकारी को अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत संबंधित वर्ष की आय के विषय में उनके विरुद्ध कार्रवाई करनी चाहिए थी"। यदि इस निर्णय को सुसंगत तथ्यों और अपीलार्थियों द्वारा प्रिवी काउंसिल के समक्ष उठाए गए तर्क की प्रकृति के आलोक में विचार किया जाए, तो यह स्वीकार करना कठिन होगा कि प्रिवी काउंसिल के अनुसार, धारा 34 वहाँ लागू नहीं होगी जहाँ निर्धारिती के विरुद्ध धारा 22(2) के अंतर्गत नोटिस जारी किया गया हो, उसके द्वारा विवरणी प्रस्तुत की गई हो और उक्त निर्धारण कार्यवाहियों में आयकर अधिकारी द्वारा अंतिम आदेश पारित किया गया हो। यह कहना कि जब तक निर्धारण कार्यवाहियाँ लंबित हों, यह मानना असंभव है कि कोई आय निर्धारण से बच गई है, यह कहने से बहुत भिन्न है कि जहाँ निर्धारण कार्यवाहियाँ की गई हों और उन पर अंतिम आदेश पारित हो गया हो वहाँ आय निर्धारण से बची हुई नहीं मानी जा सकती।

3(1930) एल.एल.आर. 58 कैल. 909, 912।

अतः हमें यह अभिनिर्धारित करना होगा कि यह निर्णय वर्तमान मामले में धारा 34 की अप्रयोज्यता के विषय में श्री शास्त्री के तर्क का समर्थन नहीं करता।

इस संबंध में कलकत्ता उच्च न्यायालय के *लच्छीराम बसंतलाल के संदर्भ में (उपर्युक्त)* ([4]) के निर्णय का संदर्भ सुसंगत हो सकता है क्योंकि जैसा कि हम पहले ही इंगित कर चुके हैं, इस मामले में धारा 34 के प्रभाव के विषय में रैंकिन मुख्य न्यायाधीश द्वारा की गई विधि की कथन को *राजेंद्र नाथ मुखर्जी (उपर्युक्त)* ([5]) के मामले में प्रिवी काउंसिल द्वारा स्पष्ट रूप से अनुमोदित किया गया है। इस प्रश्न से निपटते हुए कि आयकर अधिकारी का निर्धारण आदेश अवैध था क्योंकि यह संबंधित वित्तीय वर्ष की समाप्ति के एक वर्ष से अधिक समय बाद पारित किया गया था और आयकर अधिकारी धारा 34 के अंतर्गत कार्य कर सकता था, रैंकिन मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि आय को निर्धारण से बची हुई नहीं कहा जा सकता सिवाय उस मामले के जहाँ ऐसा निर्धारण किया गया हो जिसमें आय सम्मिलित नहीं है। यह सत्य है कि यह टिप्पणी *इतरोक्ति* है किंतु यह विद्वान मुख्य न्यायाधीश द्वारा बाद में की गई विधि की कथन के पूर्णतः अनुरूप है जिसे प्रिवी काउंसिल का अनुमोदन प्राप्त हुआ है।

श्री शास्त्री ने धारा 34 की अपनी व्याख्या के समर्थन में इस न्यायालय के *मेसर्स चटूराम होरीराम लिमिटेड बनाम आयकर आयुक्त, बिहार एवं उड़ीसा* ([6]) के निर्णय पर भी निर्भर किया है। *चटूराम के मामले (उपर्युक्त)* में निर्धारिती को आयकर हेतु निर्धारित किया गया था जिसे अपील पर घटाया गया और आयकर अपीलीय अधिकरण द्वारा इस आधार पर अपास्त किया गया कि 1939 का भारतीय वित्त अधिनियम निर्धारण वर्ष के दौरान छोटानागपुर में प्रवृत नहीं था। संदर्भ पर अधिकरण के निर्णय को उच्च न्यायालय ने बरकरार रखा। तत्पश्चात बिहार के राज्यपाल ने बिहार विनियमन 4/1942 प्रख्यापित किया

4(1930) एल.एल.आर. 58 कैल. 909, 912।

5(1933) 61 आई.ए. 10, 16।

6(1955) 2 एस.सी.आर. 290।

और इस प्रकार 30 मार्च, 1939 से पूर्वव्यापी रूप से छोटानागपुर में 1939 के भारतीय वित्त अधिनियम को प्रवृत किया। इस अध्यादेश को गवर्नर-जनरल की सहमति प्राप्त हुई। दिनांक 8 फरवरी, 1944 को आयकर अधिकारी ने एक आदेश पारित किया जिसके अनुसरण में धारा 34 के प्रावधानों के अंतर्गत निर्धारिती के विरुद्ध कार्यवाही की गई और इसके परिणामस्वरूप निर्धारिती का आयकर हेतु निर्धारण हुआ। निर्धारिती द्वारा इस न्यायालय में अपनी अपील में उठाया गया तर्क यह था कि धारा 34 के अंतर्गत उसके विरुद्ध जारी नोटिस अवैध था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि निर्धारित की जाने वाली आय, लाभ या अभिलाभ आयकर हेतु प्रभार्य थे और यह धारा 34 के अर्थ में प्रभार्य आय के निर्धारण से बचने का मामला था, न कि मात्र आयकर के गैर-निर्धारण का मामला। जहाँ तक निर्णय का संबंध है, यह सारतः श्री शास्त्री द्वारा उठाए गए तर्क से असंगत है। तथापि वे न्यायमूर्ति जगन्नाधदास की इन टिप्पणियों पर निर्भर करते हैं कि "अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि निर्धारण से बचना मात्र गैर-निर्धारण के समतुल्य नहीं है, निराधार नहीं है" और वे इंगित करते हैं कि अंतिम निर्णय के समर्थन में विद्वान न्यायाधीश द्वारा दिया गया कारण यह था कि यद्यपि पूर्व निर्धारण कार्यवाहियाँ की गई थीं, वे आय की कर हेतु प्रभार्यता के बावजूद निर्धारण प्राधिकारियों को छोड़कर किसी अन्य कारण से उत्पन्न किसी खामी के कारण वैध निर्धारण में परिणत होने में विफल रहीं। श्री शास्त्री का कहना है कि केवल उन मामलों में जहाँ यह दर्शाया जा सके कि निर्धारण प्राधिकारियों को छोड़कर अन्य कारणों से आय निर्धारण से बची हो, धारा 34 का आह्वान किया जा सकता है। हमें नहीं लगता कि निर्णय के उचित पाठ से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है। जिन टिप्पणियों पर श्री शास्त्री निर्भर करते हैं वे स्वाभाविक रूप से उन तथ्यों के संदर्भ में की गई हैं जिनसे न्यायालय निपट रहा था और उन्हें स्पष्टतः उन तथ्यों के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए। यह सुझाव देना अनुचित होगा कि इन टिप्पणियों का आशय धारा 34 के आवेदन को केवल उन मामलों तक सीमित करना था जहाँ निर्धारण प्राधिकारियों से भिन्न कारणों से आय निर्धारण से बची हो। वास्तव में

न्यायमूर्ति जगन्नाधदास ने यह जोड़ने की सावधानी बरती है कि यह बताना अनावश्यक था कि निर्धारण से बचना वास्तव में क्या है और यह निर्णय को उस संकीर्ण आधार पर रखना पर्याप्त होगा जिसका हमने अभी संदर्भ दिया है। हम संतुष्ट हैं कि यह निर्णय अपीलार्थी के मामले में किसी सहायता का नहीं है।

ऐसा प्रतीत होता है कि धारा 34 की व्याख्या ने में इस देश के उच्च न्यायालयों में न्यायिक मत की भिन्नता हुई है, और इसलिए उन निर्णयों का संक्षेप में संदर्भ देना आवश्यक होगा जिनकी ओर इस अपील में हमारा ध्यान आकृष्ट किया गया। *मदन लाल बनाम आयकर आयुक्त, पंजाब* ([7]) में लाहौर उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के बहुमत के निर्णय ने अभिनिर्धारित किया कि तत्कालीन प्रचलित अधिनियम की धारा 34 केवल उन मामलों तक सीमित नहीं थी जहाँ आय की बिल्कुल विवरणी नहीं दी गई हो। यह उन मामलों पर भी लागू होती थी जहाँ निर्धारिती द्वारा प्रस्तुत विवरणी में आय की किसी मद को सम्मिलित किया गया हो किंतु आयकर अधिकारी द्वारा उसे निर्धारित नहीं किया गया हो, या यदि प्रारंभ में निर्धारित किया गया हो तो निर्धारण किसी अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा रद्द कर दिया गया हो। बहुमत का निर्णय देने वाले दीन मोहम्मद न्यायाधीश ने "निर्धारण से बचा" शब्दों की व्याख्या के विषय में मद्रास उच्च न्यायालय के *आयकर आयुक्त बनाम पार्लाकिमेडी के राजा* ([8]) के कूट्स ट्रॉटर मुख्य न्यायाधीश की राय से अपनी सहमति व्यक्त की है कि उक्त शब्द "उन मामलों पर भी लागू होते हैं जहाँ आयकर अधिकारी ने जानबूझकर अधिनियम की गलत व्याख्या अपनाई हो उतना ही जितना कि उस मामले में जहाँ किसी अधिकारी ने बिल्कुल विचार नहीं किया हो, बल्कि केवल निर्धारणीय संपत्ति को अपनी दृष्टि से और अपने निर्धारण से बाहर रखा हो"।

---

7 [1935] 3 एल.टी.आर. 438।

8 (1926) 49 मैड. 22, 28।

अगला मामला जो हमारे समक्ष उद्धृत किया गया है, बॉम्बे उच्च न्यायालय का *आयकर आयुक्त, बॉम्बे बनाम सर महोमेद यूसुफ इस्माइल* ([9]) का निर्णय है। इस मामले में ब्यूमॉन्ट मुख्य न्यायाधीश ने धारा 34 में "निश्चित सूचना" शब्द की व्याख्या की और अभिनिर्धारित किया कि उक्त धारा के अंतर्गत कार्रवाई करने के लिए, किसी तथ्य के विषय में कुछ सूचना होनी चाहिए जो आयकर अधिकारी को यह पता लगाने के लिए प्रेरित करे कि आय निर्धारण से बची है या न्यून निर्धारित हुई है। तथापि विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने यह जोड़ा कि तथ्य विधि की स्थिति के विषय में हो सकता है, उदाहरण के लिए, कि किसी मामले के निर्णय को उलट दिया गया हो या कोई अधिनियम पारित किया गया हो जो आयकर अधिकारी के ध्यान में नहीं लाया गया हो। सहमतिपूर्ण निर्णय देने वाले छागला न्यायाधीश इस मत की ओर झुके कि धारा में "सूचना" शब्द केवल तथ्यों या विशिष्टताओं के विषय में सूचना तक सीमित होना चाहिए और इसमें विधि के विषय में सूचना सम्मिलित नहीं हो सकती। उनकी राय में, "विधि की गलती या विधि के प्रावधानों की गलतफहमी 1939 में यथासंशोधित धारा की भाषा द्वारा आच्छादित नहीं है"। यह इंगित किया जा सकता है कि इस निष्कर्ष पर पहुँचने में विद्वान न्यायाधीश ने *एंडर्सन एंड हालस्टेड लिमिटेड बनाम बिरेल* ([10]) में रौलट न्यायाधीश की इन टिप्पणियों पर निर्भर किया प्रतीत होते हैं कि "अंग्रेजी अधिनियम की धारा 125 में 'खोजना' शब्द में लेखा-प्रश्न पर, जो मत का प्रश्न है, उन्हीं तथ्यों एवं अंकों पर मत का मात्र परिवर्तन सम्मिलित नहीं है"। प्रसंगवश, हम यह टिप्पणी कर सकते हैं कि न्यायमूर्ति रौलट द्वारा विधि के इस कथन को *कमर्शियल स्ट्रक्चर्स लिमिटेड बनाम आर.ए. ब्रिग्स* ([11]) में अपील न्यायालय द्वारा उलट दिया गया प्रतीत होता है।

9[1944] 12 आई.टी.आर. 8।

10 [1932] 1 के.बी. 271।

11 [1949] 17 आई.टी.आर. अनुपूरक 30।

बॉम्बे उच्च न्यायालय के निर्णय की रिपोर्ट होने के तुरंत पश्चात, वही प्रश्न मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष *रघवालु नायडू एंड संस बनाम आयकर आयुक्त, मद्रास* ([12]) में उठाया गया। न्यायालय का निर्णय देने वाले लीच मुख्य न्यायाधीश इस आधार पर कि "ऐसे प्रश्न पर मतभेद से बचना बहुत वांछनीय है" "निश्चित सूचना" अभिव्यक्ति पर बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा की गई व्याख्या से सहमत हुए। तथापि उन्होंने यह जोड़ा कि 1939 में यथासंशोधित संशोधित धारा के प्रारंभिक शब्दों के दृष्टिगत "खोजता है" शब्द का अर्थ 'विश्वास करने का कारण है' या 'संतुष्ट होता है' से अधिक है और इसलिए अंग्रेजी अधिनियम की धारा 125 में "खोजता है" शब्द के अर्थ पर अंग्रेजी निर्णयों को सुसंगत मानना उचित नहीं होगा। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि बॉम्बे निर्णय का अनुसरण करने में उनका यह अभिप्राय नहीं है कि निश्चित सूचना तथ्य के शुद्ध प्रश्न से संबंधित होनी चाहिए क्योंकि उन सभी मामलों को आच्छादित करने वाला कोई नियम निर्धारित करना असंभव था जिनमें इस धारा का आह्वान किया जा सकता है।

कलकत्ता उच्च न्यायालय में इस बिंदु पर परस्पर विरोधी मत व्यक्त किए गए हैं। *महाराजा बिक्रम किशोर त्रिपुरा बनाम असम प्रांत* ([13]) में, हैरिस मुख्य न्यायाधीश एवं मुखर्जी न्यायाधीश को असम कृषि आयकर अधिनियम (असम 9/1939) की धारा 30 की व्याख्या से निपटना था जो अधिनियम की धारा 34 के समतुल्य है। उन्होंने अभिनिर्धारित किया कि जहाँ निर्धारिती द्वारा विवरणी में किसी आय को सम्मिलित किया गया हो किंतु इस आधार पर उसका निर्धारण नहीं किया गया हो कि वह निर्धारणीय नहीं है, उसे ऐसी आय नहीं माना जा सकता जो निर्धारण से बची हो और असम कृषि आयकर अधिनियम की धारा 30 के अंतर्गत पुनर्निर्धारित की जा सके। अपने निर्णय में विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने उल्लेख किया कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के पूर्ववर्ती निर्णय निःसंदेह अपीलार्थी के तर्कों के विरुद्ध थे किंतु

---

12 (3) [1945] 13 आई.टी.आर. 194, 197।

13 [1949] 17 एल.टी.आर. 220।

उनका यह मत था कि प्रश्न वास्तव में *राजेंद्र नाथ मुखर्जी के मामले (उपर्युक्त)* ([14]) में प्रिवी काउंसिल के निर्णय द्वारा निर्धारित था। प्रिवी काउंसिल के निर्णय को विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने इस मत के समर्थन के रूप में पढ़ा कि धारा 34 उन मामलों में लागू नहीं होगी जहाँ आय की विवरणी दी गई हो, निर्धारण कार्यवाहियाँ की गई हों और आयकर अधिकारी द्वारा निर्धारिती के विरुद्ध अंतिम निर्धारण आदेश पारित किया गया हो। हम पहले ही इंगित कर चुके हैं कि प्रिवी काउंसिल का निर्णय इस मत का समर्थन नहीं करता। *राजा बिनोय कुमार सहस रॉय बनाम आयकर आयुक्त, पश्चिम बंगाल* ([15]) में, चक्रवर्ती मुख्य न्यायाधीश एवं लाहिड़ी न्यायाधीश ने विपरीत मत लिया है। उन्होंने अभिनिर्धारित किया है कि आधिकारिक प्रकृति के किसी बाह्य स्रोत से नवीन रूप से प्राप्त विधि की वास्तविक स्थिति या अर्थ के बारे में जानकारी, धारा 34 के अर्थ में निश्चित जानकारी है।

ऐसा प्रतीत होता है कि धारा 34 के प्रावधानों के विस्तार एवं प्रभाव की व्याख्या करने में, उच्च न्यायालयों को यह तय करने का अवसर मिला है कि क्या किसी बाह्य स्रोत से नई सूचना के बिना यह सोचते हुए कि उसका मूल निर्धारण आदेश में निर्णय गलत था, आयकर अधिकारी के लिए धारा 34 के अंतर्गत कार्रवाई करना उचित होगा, या क्या आयकर अधिकारी का उत्तराधिकारी इस आधार पर धारा 34 के अंतर्गत कार्य कर सकता है कि उसके पूर्वाधिकारी द्वारा पारित निर्धारण आदेश त्रुटिपूर्ण था, और इस बिंदु पर भिन्न-भिन्न मत व्यक्त किए गए हैं। उत्तरदाता की ओर से श्री राजगोपाल शास्त्री ने सुझाया कि 1948 में यथासंशोधित धारा 34 के प्रावधानों के अंतर्गत, किसी बाह्य स्रोत से सूचना के बिना मात्र अपना मत बदलने और इस निष्कर्ष पर पहुँचने पर भी कि किसी विशेष मामले में उसने भूलवश किसी निर्धारिती की आय को निर्धारण से बचने दिया है, आयकर अधिकारी के लिए उक्त धारा के अंतर्गत कार्य करना उचित होगा। हम वर्तमान अपील में इस बिंदु पर कोई मत

---

14 (1933) 61 आई.ए. 10, 16।

15 [1953] 24 एल.टी.आर. 70।

व्यक्त करने का प्रस्ताव नहीं करते। परिणामतः हम अभिनिर्धारित करते हैं कि पटना उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचने में सही था कि प्रिवी काउंसिल का निर्णय धारा 34(1)(ख) के अर्थ में सूचना था और उक्त निर्णय ने आयकर अधिकारी के इस विश्वास को उचित ठहराया कि संबंधित वर्ष के लिए अपीलार्थी की आय का एक भाग निर्धारण से बच गया था।

तदनुसार अपील विफल होती है और उसे लागत सहित खारिज किया जाना चाहिए।

अपील खारिज।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।